International Research Journal of Humanities, Language and Literature
ISSN: (2394-1642)
Impact Factor- 5.401, Volume 4, Issue 9, September 2017
Website- www.aarf.asia, **Email** : editor@aarf.asia , editoraarf@gmail.com

हिन्दी नाटक में रंगमंच का योगदान

HINDI NATAK ME RANGMANCH KA YOGDHAN

प्रस्तुतकर्ता

उमा चौधरी

प्रोफेसर

हिन्दी विभाग

New Horizon College Kasturi Nagar Bangalore - 43

Address:- #306, DS MAX SPRING NEST

5th Cross Rajjanna Layout

Horamavu Agra,

Bangalore- 560043

© Associated Asia Research Foundation (AARF)
A Monthly Double-Blind Peer Reviewed Refereed Open Access International e-Journal - Included in the International Serial Directories.

हिन्दी नाटक में रंगमंच का योगदान

रंगमंच वह स्थान है जहाँ नृत्य नाटक खेल आदि हो। रंगमंच दो शब्द रंगमंच से मिलकर बना है। रंग इसलिए प्रयुक्त हुआ है कि दृश्य को आकर्षित बनाने के लिए दीवारों छतों और परदों पर विविध प्रकार की चित्रकारी की जाती है और मंच इसलिए प्रयुक्त होता है कि दर्शकों की सुविधा के लिए रंगमंच का तल फर्श से कुछ ऊँचा रहता है। भारत की रंगमंच की कला बहुत प्राचीन है। नाटय शास्त्र में नाटय प्रर्दशन एंव नाटक के सभी व्यावहारिक पक्षों का विवेचन इसका प्रमाण हैं। हिन्दी रंगमंच के इतिहास में लोक नाटयों का महान योगदान है। वर्तमान दौर में रंगकर्म की तीव्र लहर ने नाटय लेखन में रंगानुभव से नाटय सम्भावनाओं का द्वार खोला है। रंगकर्म की पूर्ण प्रतिष्ठा और रंगमंचीय गतिविधियों की तीव्रता के साथ ही हिन्दी रंगान्दोलन की तत्कालीन प्रतिक्रिया से उपजी हुई सृजनात्मक उत्कृष्टता ने नाटयविधा को प्रयोगात्मक और अत्यधिक सम्भावनापूर्ण साबित कर हिन्दी और हिन्दीतर भाषा की विधाओं के रचनाकारों को भी अपनी ओर आकृष्ट किया है।

भारतवर्ष में नाटकों का प्रचार बहुत प्राचीन काल से है। नाटक रंगमंच से जुड़ी एक विधा है जिसे अभिनय करने वाले कलाकारों के माध्यम से प्रस्तुत किया जाता है। नाटक की परम्परा बहुत प्राचीन है। नाटक के शब्दों का अर्थ उस प्रकार घटित नहीं होता , नाटक के शब्दों में निहित कार्य की योग्यता रंगमंच पर सिद्ध होती है इसलिए नाटक प्रयोगधर्मी होता है। प्रयोग का तात्पर्य है- मंचन या प्रस्तुति। नाटक के आलेख को जब इस प्रक्रिया के माध्यम से प्रस्तुत किया जाता है तब रसानुभूति होती है। लिखा हुआ नाटक अपने आप में पूर्ण कृति नहीं होती। रंगमंच की पृष्टभूमि और पात्रों का अभिनय उसे पूर्णता प्रदान करते हैं। एक कृति के रूप में नाटक तभी सफलता प्राप्त कर सकता है जब उसमें रंगमंच पर अभिनीत होने की संभावनाएँ निहित हो।

हिन्दी साहित्य में नाटक का विकास आधुनिक युग में ही हुआ है। आधुनिक काल में अंग्रेजी राज्य की स्थापना के साथ रंगमंच को प्रोत्साहन मिला। कई व्यावसायिक मंडलियाँ स्थापित हुई। व्यावसायिक रंगमंच के प्रवर्तक भारतेन्दु हरिश्चन्द्र थे। भारतेन्दु हरिश्चन्द्र ने पारसी रंगमंच की कमियों का पर्दाफाश करते हुए "नाटक" नामक लेख लिखा। नाटय साहित्य की परम्परा का प्रवर्तन भारतेन्दु द्वारा होता है। ये अदितीय प्रतिभा के धनी थे। इन्होंने अपने नाटकों में रूढ़िग्रस्त और मानसिक दासता में जकड़ी हुई जनता, भ्रष्ट राजनीति के बारे में बताया और उनके मन में सुधारवादी विचारों को उद्रेक किया।भारतेन्दु युग के नाटक मूल रूप से मनोरंजन के साथ-साथ जनजागरण के भी उद्देश्य से जुड़े हुए है। इस युग के नाटकों में ऐतिहासिक, पौराणिक तथा काल्पनिक कथाओं को विषय वस्तु बनाया गया है। समाज सुधार, राष्ट्रीय गौरव नाटक के द्वारा प्रस्तुत किया गया है।

आचार्य महावीर प्रसाद जी ने भारतेन्दु और प्रसाद युग के नाटक और रंगमंच को जोड़ने का दायित्व निभाया। उस काल के भारतेन्दु तथा अनेक समकालीन नाटककारों ने लोक चेतना के विकास के लिए नाटकों की रचना की इसलिए उस समय की समाजिक समस्याओं को नाटकों में

अभिव्यक्त होने का अच्छा अवसर मिला। इस युग में खुले मंच पर भी नाटक खेले गए है सिर्फ मौलिक ही नहीं अनुदित और रूपांतरिक नाटकों में कफन, गोदान, रंगभूमि आदि नाटकों का उल्लेख मिलता है।

नाटक मंचन के लिए लिखा जाता है। मंचित होने के पश्चात उसे पूर्णता मिलती है। रंगमंच विचाच और स्वतंत्रता का महत्वपूर्ण स्रोत्र है। रंगमंच के लिए रूढिवाद का विरोध अनिवार्य है। रंगमंच वह शक्ति है जिससे वह स्वंय के लिए भी प्रश्न करता है। रंगकर्म इतिहास से नहीं जीता, अपने कर्म से जीता है।

किसी भी नाटक की प्रस्तुति में मूलतत्व या कथ्य ही महत्वपूर्ण होता है और यदि यह सशक्त ढ़ग से उभरकर दर्शकों तक संप्रेषित हो रहा हो तो किसी भी अतिरिक्त उत्पादन की आवश्यकता नहीं है।

नाटकों को आधुनिक तकनीक के द्वारा ही रंगमंच पर अत्यधिक प्रभावी रूप में देख सकते है। इस संबंध में जयदेव तनेजा ने अपने विचार प्रस्तुत करते हुए कहा है कि यथार्थवादी दृश्य बंध की जकड़ से स्वंय को मुक्त करके नाटककार ने कल्पना पूर्ण प्रकाश, संयोजन, संगीत तथा न्यूनतम मंच – उपकरणों के उपयोग से अतीत और वर्तमान के लगभग साथ-साथ लगातार चलते दृश्यों को प्रस्तुत करने में सफलता प्राप्त की है। (1)

प्रख्यात उपन्यासकार प्रेमचन्द के सुप्रसिद्ध उपन्यास गोदान का प्रमुख पात्र होरी हिन्दी साहित्य का अभिन्न अंग बन चुका है, उसे केन्द्र बनाकर विष्णु प्रभाकर ने नाटक लिखा। रंगमंच पर भी उसे दिखाया गया। यह नाटक ग्रामीण जीवन व अन्याय के प्रति जागरूक करता है। गावँ में होने वाली चहल-पहल कभी-कभी बहुत खटकती है। नाटक का उद्देश्य यही है कि आम जनता को पता चले कि गाँव में क्या हो रहा है।(2)

दक्षिण भारत के गिने-चुने नाटककारों में जि.जे.हरिजीत जी का नाम बड़े आदर से लिया जाता है। उनकी कृतियों में ऐसे विषयों का चयन होता है जिनमें मानवीय मूल्यों के रक्षण तथा समाज व देश के हित के सरोकार होते हैं। वे नाटक के द्वारा समाज की बुराईयों का लेखा-जोखा पाठक, दर्शकगण के सामने प्रस्तुत करना चाहते हैँ। समाज के प्रत्येक क्षेत्र में जागरूकता लाना चाहते हैं। उन्होंने हर सामाजिक बुराई के विरूद्ध पात्रों द्वारा अपना आक्रोश व्यक्त किया है। समस्याओं को एक साथ रखते हुए उनका समाधान देने की कोशिश की है। यह नाटक अपने आप में पूर्ण और सफल नाटक है। हरिजीत जी के कई नाटकों की प्रस्तुति रंगमंच पर सफलतापूर्वक की जा चुकी है। उनके नाटकों से रंगमंच का अनिवार्य आत्मीय रिश्ता जुड़ा होता है।

सुशील कुमार सिंह जी का अलख आजादी की नाटक की सशक्त प्रस्तुति ने दर्शकों को बाँधे रखा। एक इतिहास को नाटक का स्वरूप देना और उसे मंच पर प्रस्तुत करना निश्चय ही दोनों चीजों को बनाए रखना और उसमें जीवांतता प्रदान करना एक चुनौती है। इस नाटक में अंग्रेजों के शासन के पूर्व से लेकर आजादी मिलने तक की तमाम एतिहासिक घटनाओं को चाहे वो

मुगल बादशाहों के समय की हो, मंगल पाण्डे का विद्रोह या फिर गाँधी जी के असहयोग आंदोलन की बात हो सभी प्रसंगो को बहुत ही अच्छे ढंग से मंचित किया गया। देश के गुलाम होने की पृष्ठभूमि से आजादी मिलने तक की कहानी को मंच पर दिखाया गया।

नाटक के अन्त में छोड़े गए एक प्रश्न इधर वाले कहते है ये मुल्क तुम्हारा नहीं है उधर जाओ। उधर वाले कहते है दफा हो जाओ ये मुल्क तुम्हारा नहीं है। इधर वाले कहते है ये हिंदुओं का है। उधर वाले कहते है ये मुसलमानों का है। न मैं मुसलमान हूँ न मैं हिंदू हूँ मैं तो एक इंसान हूँ फिर इंसानो का मुल्क कौन सा है।(3) हिन्दुस्तान और मुसलमानों के पाकिस्तान तो बन गया लेकिन कोई बताए इंसानों के लिए कौन सा देश है। नाटक में इस बात का भी एहसास कराया गया है कि हम पुन: गुलामी की ओर बढ़ रहे हैं। यह लोगों पर ज्यादा प्रभाव डालता है।

नाटक तभी सफलता प्राप्त कर सकता है जब उसमें रंगमंच पर अभिनीत होने की संभावनाएँ निहित हो। इस तरह नाटक सीधे जिन्दगी की शर्तों से जुड़े और उनकी विषमताओं के साथ जूझते व्यक्ति की यंत्रणा उसके भीतर यथार्थ को रंग माध्यम से प्रस्तुत करने का बीड़ा उठाते है।

हिन्दी नाटक और रंगमंच को एक सही और सार्थक पहचान देने की दिक्षा में मोहन राकेश का स्थान हिन्दी नाटककारों में अग्रगण्य है। उन्होंने अपनी मौलिक दृष्टि, भावपूर्ण संवेदना तथा जीवन के अनुभव-वैविध्य के आधार पर हिन्दी नाटक को कथ्य एवं शिल्प पर परंपरागत दृष्टिकोण से मुक्त कर विकास के नये आयामों से परिचित कराया। लहरों के राजहंस नारी के आकर्षण विकर्षण की अनुभूति की अभिव्यक्ति है। एक में समर्पित नारी का चित्रण है तो दूसरे में रूप पर गर्व करने वाली नारी की विविध मन:स्थितियों के संदर्भो का उल्लेख है। इसमें नाटककार ने भौतिकता और आध्यात्मिकता के मध्य उलझे हुए व्यक्ति की चेतना को नन्द व सुन्दरी के माध्यम से मुखरित करने का प्रयास किया है। राकेश जी की धारणा है कि जिस नाटक में रंगमचीय अपेक्षाओं की उपेक्षा हुई, सहित्यमूल्य रहते हुए भी नाट्यकृति नहीं मानी जा सकती। इस कथन से स्पष्ट होता है कि संपूर्णता अभिनय-प्रर्दशन में निर्भर है।(4)

, रंगमंच का आभास हमें ऋग्वेद से चलता है। ऋवैदिक काल में रंगमंच पर नृत्यकला का प्रदर्शन किया जाता था। वैदिक काल में यज्ञ के समय जो संवाद योजना होती थी उसी के अभिनय से संस्कृत रंगमंच का उदय माना जाता है। प्राचीन काल में रंगमंच का अभाव था लोग अपना मनोरंजन कठपुतली नाच द्वारा किया करते थे। मुगल शासन काल में रामलीला और नौटंकी जैसी लोकप्रिय लीलाओं का जन्म हुआ। भगवान की लीलाओं को जनता के सामने लाने के लिए रंगमंच की आवश्यकता अनुभव की गयी। यहीं से लोकमंच का श्रीगणेश हुआ।

नाटक में संवाद एक सशक्त संप्रेक्षण का माध्यम है। इतना ही नहीं, नाटक के दृश्य परिवर्तन भी एक महत्वपूर्ण विषय है। एक दृश्य के बाद दूसरा दृश्य परिवर्तित करते समय अंधेरा होना या प्रकाश को स्थानांतरित करना भी एक कला है। कभी-कभी नाटककार लंबे समय के अंतराल को

प्रस्तुत करने के लिए ब्लैक-आऊट पद्धति का प्रयोग करता है यह भी पाश्चात्य रंगमंच से प्रभावित हुआ है। डा. जयदेव तनेजा के अनुसार, मंच सज्जा और दृश्यों का उल्लेख न करके नाटककार ने केवल छायालोक के माध्यम से ही दृश्यांतर किया है और इसप्रकार कई छोटे-छोटे दृश्यांतरो द्वारा समय एवं घटनाओं के लंबे फैलाव को अपने में समेट लिया है।(5)

समाज के उत्थान में रंगमंच का योगदान

नाटक सीधे जिन्दगी की शर्तों से जुड़े और उसकी विषमताओं के साथ व्यक्ति की यंत्रणा उसके भीतर यथार्थ को रंग-माध्यम से प्रस्तुत करने का बीड़ा उठाते हैं। बदलाव की चेतना और आकुलता को उजागर करने के सशक्त कथ्य से ही हिन्दी के रचनात्मक नाट्य के लिए शुभारम्भ की स्थिति मानी जा सकती है।

चित्रपट के आ जाने से रंगमंच का स्थान बहुत संकीर्ण हो गया है। सिनेमा का आकर्षण अधिक होने पर भी नाटकों के लिए उपयुक्त रंगमंच बनाने का पाश्चात्य देशों में काफी प्रयास हो रहा है। मनोरंजन की दृष्टि से कम, शिक्षा की दृष्टि से इसकी उपयोगिता अधिक समझी गयी है। रंगमंच के प्रश्न को लेकर कुछ वर्षो से बहुत गम्भीर स्तर पर विचार किया जाने लगा है। रंगमंच को दर्शकों तक लाने या दर्शकों को रंगमंच तक ले जाने के लिए हमें क्या उपाय करने चाहिए। किन तकनीकों से रंगमंच को सामान्य दर्शकों के लिए अधिक आकर्षक बनाया जा सकता है।

इस दृष्टि से रंगमंच के प्रति केंद्रीय सरकार और राज्य सरकारों की अनुभूति बढ़ती जा रही है और वे सक्रिय सहायता भी देती हैं।

संदर्भ ग्रन्थ सूची

(1) समकालीन हिन्दी नाटक एंव रंगमंच - जयदेव तनेजा, तक्षशिला प्रकाशन, नई दिल्ली पृष्ठ संख्या-42

(2) होरी - विष्णु प्रभाकर

(3) अलख आजादी की - सुशील कुमार सिंह - पृष्ठ संख्या - 85

(4) लहरों के राजहंस - मोहन राकेश

(5) नई रंगचेतना और हिन्दी नाटककार - जयदेव तनेजा, तक्षशिला प्रकाशन, नई दिल्ली 1994 पृष्ठ संख्या - 143